

तदा गोपवती तस्य स्वनाथस्यातिसंभ्रमम्। आगतस्वागतं कृत्वा सा ददाति स्म भोजनम् ॥८॥
 तदुद्वेगात्तदा तस्मै रोचते नैव भोजनम्। महादुःखाश्रितस्यात्र का प्रीतिर्भोजनादिषु ॥९॥
 ततस्तया सुपापिन्या गोपवत्या प्रकोपतः। सुभद्राया मुखं पश्य यतस्ते रोचतेशनम् ॥१०॥
 इत्युक्त्वा मस्तकं तच्च क्षिप्तं तद्भाजने तदा। तद्दृष्ट्वा भयभीतोसौ राक्षसीयं भयानका ॥११॥
 इति ज्ञात्वा द्रुतं चित्ते नश्यन्सिंहबलो भटः। कुन्तेन मारितः कष्टं पापिन्या दुष्टयोषिता ॥१२॥
 मत्वा स्त्रीचरितं चेति स्वचित्ते चतुरोत्तमैः। विश्वासो नैव कर्तव्यो दुष्टस्त्रीणां कदाचन ॥१३॥
 स जयति जिनदेवो देवदेवेन्द्रवन्द्यो मदनमदकरीन्द्रध्वंसने यो मृगेन्द्रः।
 तव भवभयहर्ता स्वर्गमोक्षप्रकर्ता शिवयुवतिसुभर्ता शान्तये शान्तिदाता ॥१४॥

इति कथाकोशे गोपवती-कथा समाप्ता।

३२. वीरवती-कथा

नत्वाहंतं जगन्मित्रं पवित्रं मुक्तिशर्मदम्। वक्ष्ये वीरवतीवृत्तं सतां वैराग्यकारणम् ॥१॥

पापिनी ने सुभद्रा का मस्तक काट लिया और उसे लेकर रात ही में अपने घर पर आ गई। सबेरा होते ही यह हाल सिंहबल को मालूम हुआ। सुभद्रा के मुर्दे को देखकर उसे बेहद दुःख हुआ। वह खिन्न मन होकर अपने घर आ गया। उसे आया देखकर गोपवती अब उसका बड़ा आदर-सत्कार करने लगी। बड़ा स्नेह प्रकट कर उसे भोजन कराने लगी। पर सिंहबल के हृदय पर तो सुभद्रा के मरण की बड़ी गहरी चोट लगी थी, इसलिए उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता था और वह सदा उदास रहा करता था और सच भी है, एक महा दुःखी को भोजन वगैरह में क्या प्रीति होती होगी? सिंहबल की सुभद्रा के लिए वह दशा देख गोपवती का क्रोध और भी बढ़ गया। एक दिन बेचारा सिंहबल उदास मन से भोजन कर रहा था। यह देख गोपवती ने क्रोध से सुभद्रा का मस्तक लाकर उसकी थाली में डाल दिया और बोली-हाँ, बिना इसके देखे तुझे भोजन अच्छा नहीं लगता था; अब तो अच्छा लगेगा न? सुभद्रा के सिर को देखकर सिंहबल काँप गया। वह “हाय! यह तो महाराक्षसी है” इस प्रकार जोर से चिल्लाकर डर के मारे भागने लगा। इतने में राक्षसी गोपवती ने पास ही पड़े हुए भाले को उठाकर सिंहबल की पीठ में जोर से मारा कि वह उसी समय तड़फड़ा कर वहीं पर ढेर हो गया। गोपवती के ऐसे घृणित चरित को देखकर बुद्धिमानों को उचित है कि वे दुष्ट स्त्रियों पर कभी विश्वास न लावें ॥६-१३॥

वे कर्मों के जीतने वाले जिनेन्द्र भगवान् संसार में सर्वश्रेष्ठ कहलावें जो कामरूपी हाथी के मारने को सिंह हैं, संसार का भय मिटाने वाले हैं, शान्ति, स्वर्ग और मोक्ष के देने वाले हैं और मोक्षरूपी रमणी-रत्न के स्वामी हैं। वे मुझे भी शान्ति प्रदान करें ॥१४॥

३२. वीरवती की कथा

संसार के बन्धु, पवित्रता की मूर्ति और मुक्ति का स्वतंत्रता का सुख देने वाले जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर वीरवती का उपाख्यान लिखा जाता है, जो सत्पुरुषों के लिए वैराग्य को बढ़ाने वाला है ॥१॥

पुरे राजगृहे श्रेष्ठी धनमित्रो धनैर्युतः। धारिणी श्रेष्ठिनी तस्य तयोर्दत्तोभवत्सुतः ॥२॥
 तथा भूमिगृहे नाम्ना नगरे सम्पदाभृते। आनन्दमित्रवत्योश्च पुत्री वीरवती मता ॥३॥
 तां कन्यां कुलजाचारैः स दत्तः परिणीतवान्। सम्बन्धो विधिना बद्धो धीमता केन वार्यते ॥४॥
 तत्रैव नगरे चोरः प्रचण्डोगारनामकः। रक्ता वीरवती तस्मिन्सा जाता पापकर्मणि ॥५॥
 एकदासौ सुधीर्दत्तो रत्नद्वीपं मनोहरम्। गत्वोपाज्य धनं भूरि वासरैर्बहुभिर्मुदा ॥६॥
 आगच्छन्स्वसुरावासं भार्या संसक्तमानसः। महाटव्यां सहस्रादिभटचोरेण वीक्षितः ॥७॥
 तदा कौतूहलात्सोपि तस्करस्तस्य पृष्ठतः। दृष्टुं तच्चेष्टितं मूढं तत्पुरं च समागतः ॥८॥
 मन्दिरे श्वसुरस्योच्चैरागतस्य तदा द्रुतम्। भार्या तातादिभिस्तस्य कृता प्राघूर्णिकक्रिया ॥९॥
 तस्मिन्नेव दिने पापी चोरो गारकसंज्ञकः। धृत्वा स कोट्टपालाद्यैः शूले प्रोतः सुकष्टतः ॥१०॥
 रात्रौ वीरवती सापि सुप्तं त्यक्त्वा च दत्तकम्। चचाल तस्कराभ्यर्णं खड्गं कृत्वा करे खरम् ॥११॥

राजगृह नगर में धनमित्र नामक सेठ रहता था। उसकी स्त्री का नाम धारिणी और पुत्र का दत्त था। भूमिगृह नामक एक और सुन्दर नगर था। उसमें आनन्द नाम का एक साधारण गृहस्थ रहता था। इसकी स्त्री मित्रवती थी। उसके एक वीरवती नाम की कन्या हुई। वीरवती का व्याह दत्त के साथ हुआ। सो ठीक ही है, जो सम्बन्ध दैव को मंजूर होता है उसे कौन रोक सकता है ॥२-४॥

यहीं एक चोर रहता था। इसका नाम था गारक। किसी समय वीरवती ने इसे देखा। वह इसकी सुन्दरता पर मुग्ध हो गई। एक बार दत्त रत्नद्वीप से धन कमाकर घर की ओर रवाना हुआ। रास्ते में इसकी ससुराल पड़ी। इसे अपने प्रियतमा से मिले बहुत दिन हो गए थे और यह उससे बहुत प्रेम भी करता था, इसलिए इसने ससुराल होकर घर जाना उचित समझा। यह रास्ते में एक जंगल में ठहरा। यहीं एक सहस्रभट नाम के चोर ने इसे देखा। यहाँ से चलते समय दत्त के पीछे यह चोर भी विनोद से हो लिया और साथ-साथ भूमिगृह में आ पहुँचा ॥५-८॥

ससुराल में दत्त का बहुत कुछ आदर-सत्कार हुआ। वीरवती भी बड़े प्रेम के साथ इससे मिली। पर उसका चित्त स्वभाव-प्रसन्न न होकर कुछ बनावट को लिए था। उसका मन किसी गहरी चोट से जर्जरित है, इस बात को चतुर पुरुष उसके चेहरे के रंग-ढंग से बहुत जल्दी ताड़ सकता था। पर सरल-स्वभावी दत्त इसका रतीभर भी पता नहीं पा सका। कारण, अपनी स्त्री के सम्बन्ध में उसे स्वप्न में भी किसी तरह का सन्देह न था। बात यह थी कि जिस चोर से वीरवती की आशनाई थी, वह आज किसी बड़े भारी अपराध के कारण सूली पर चढ़ाया जाने वाला था। वीरवती को उसी का बड़ा रंज था और इसी से उसका चित्त चल-विचल हो रहा था। रात के समय जब सब घर के लोग सो गए तब वीरवती अकेली उठी और हाथ में एक तलवार लिए वहीं पहुँची जहाँ अपराधी सूली पर चढ़ाये जाते थे। इसे घर से निकलते समय सहस्रभट चोर ने देख लिया। वह यह देखने के लिए कि इतनी रात में यह अकेली कहाँ जाती है, उसके पीछे-पीछे हो गया। वीरवती को उसके पाँवों

सहस्रभटचोरोपि दृष्टुं तस्याश्चरित्रकम्। पृष्ठतश्चलितो गूढं चौराः केचिद्विनोदिनः ॥१२॥
 ज्ञात्वा तत्पादसंचारं तथा खड्गेन दुष्टया। छिन्ना चौराङ्गुलिश्छन्नो वटप्रारोहकोपि च ॥१३॥
 शूलाभ्यर्णं गता यावत्स चौरौ गारकोऽवदत्। हे प्रिये प्रियमाणं मां समालिङ्ग्य मम द्रुतम् ॥१४॥
 स्वताम्बूलं मुखेनोच्चैस्त्वं देहीति सुखप्रदम्। धिक्कामं मरणं प्राप्तो यतो वाञ्छति भोगकम् ॥१५॥
 ततस्तस्याः सुपापिन्याः कृत्वा मृतकसञ्चयम्। तस्योपरि चटित्वा च ताम्बूलं स्वमुखस्थितम् ॥१६॥
 ददत्याः पापतस्तस्मै तस्मिन्काले शवोच्चये। पतिते प्रियमाणेनाधरश्चोरेण खण्डितः ॥१७॥
 तस्यैव तस्करस्यास्ये सोधरः संस्थितस्तदा। गूढं वीरवती वक्त्रं वस्त्रेणाच्छाद्य वेगतः ॥१८॥
 ततो गेहं समागत्य सा दत्तस्य समीपके। अनेनैतत्कृतं चेति चक्रे पूत्कारमुच्चकैः ॥१९॥
 पापिनी लम्पटा योषित्वकुलक्षयकारिणी। किं करोति न दुष्कर्म कष्टकोटिविधायकम् ॥२०॥
 मार्यमाणो ततो दत्तो राज्ञा रुष्टेन कष्टतः। सहस्रभटचोरेण तदीयं पापचेष्टितम् ॥२१॥

की आवाज से जान पड़ा कि उसके पीछे-पीछे कोई आ रहा है, पर रात अन्धेरी होने से वह उसे देख न सकी। तब उस दुष्टा ने अपनी हाथ की तलवार का एक वार पीछे की ओर किया। उससे बेचारे सहस्रभट की अँगुलियाँ कट गई। तलवार को झटका लगने से उसे और दृढ़ विश्वास हो गया कि कोई पीछे अवश्य आ रहा है। वह देखने के लिए खड़ी हो गई, पर उसे कुछ सफलता प्राप्त न हुई। सहस्रभट कुछ और पीछे हट गया। वह फिर आगे बढ़ी। पास ही सूली का स्थान उसे दिख पड़ा। वह पीछे आने वाले की बात भूलकर दौड़ी हुई अपने यार के पास पहुँची। उसे सूली पर चढ़ाये बहुत समय नहीं हुआ था, इसलिए उसकी अभी कुछ साँसें बाकी थी। वीरवती को देखते ही उसने कहा- प्रिये, यही मेरी और तुम्हारी अन्तिम भेंट है। मैं तुम्हारी ही आशा लगाये अब तक जी रहा हूँ, नहीं तो कभी का मरमिटा होता। अब देर न कर मुझ दुःखी को अन्तिम प्रेमालिङ्गन दे, सुखी करो और आओ, अपने मुख का पान मेरे मुख में देओ; जिससे मेरा जीवन जिसके लिए अब तक टिका है उस तुमसी सुन्दरी का आलिङ्गन कर शान्ति से परमधाम सिधारे। हाय! इस काम को धिक्कार है, जो मृत्यु के मुख में पड़ा हुआ भी इसे चाहता है ॥९-१५॥

वीरवती ने अपने यार को सूली पर से उतारने का कोई उपाय तत्काल न देखकर पास में पड़े हुए कुछ मुर्दों को इकट्ठा किया और उन्हें ऊपर तले रखकर वह उन पर चढ़ी और अपना मुँह उसके मुँह के पास ले जाकर बोली-प्रियतम, लो अपनी इच्छा पूरी करो। गारक ने वीरवती के मुँह का पान लेने के लिए उसके ओठों को अपने मुँह में लिया था कि कोई ऐसा धक्का लगा जिससे वीरवती के पाँव के नीचे का मुर्दों का ढेर खिसक जाने से वीरवती नीचे आ गिरी और उसका ओठ कट गया अपना ओठ देख कर घबरा गई और उस दुष्टा ने चालाकी से घर आकर शोर मचाने लगी कि दत्त ने मेरा ओठ काट लिया और साथ ही बड़े जोर से वह रोने लगी। उसी समय अड़ोस-पड़ोस और घर के लोगों ने आकर दत्त को बाँध लिया। सच है, पापिनी, कुलटा और अपने वंश का नाश करने वाली स्त्रियाँ क्या नीच कर्म नहीं कर सकतीं? ॥१६-२०॥

सबेरा हुआ। दत्त राजा के सामने उपस्थित किया गया। उसका क्या अपराध है और वह सच

सर्वं प्रोक्त्वा नृपस्याग्रे रक्षितः शुभयोगतः। लोके पुण्यवतां पुंसां सर्वे कुर्वन्ति रक्षणम् ॥२२॥
 इत्थं ज्ञात्वा बुधैश्चित्ते कुस्त्रीवृत्तं सुदारुणम्। कार्यं कष्टकराणां हि विषयाणां विचारणम् ॥२३॥
 धन्यास्ते मुनयो जिनेन्द्रकथितैः शीलव्रतैर्मण्डिताः कामक्रूरकरीन्द्रदुर्जयघटावित्रासकण्ठीरवाः।
 ज्ञानध्यानरता विरक्तहृदया भव्याब्जसद्भास्कराः संसारार्णवतारणेतिचतुराः कुर्युः सतां मंगलम् ॥२४॥

इति कथाकोशे वीरवतीकथा समाप्ता।

३३. सुरतभूपस्य कथा

इन्द्रनागेन्द्रचन्द्रार्कैः समर्चितपदद्वयम्। भक्त्या नत्वा जिनं वक्ष्ये वृत्तं सुरतभूपतेः ॥१॥
 अयोध्यानगरे राजा सुरताख्यो महानभूत्। सती नाम्नी महादेवी योषित्वञ्चशताग्रणीः ॥२॥

है या झूठ, इसकी कुछ विशेष तलाश न की जाकर एकदम उसके मारने का हुक्म दिया गया। पर यह सबको ध्यान में रखना चाहिए कि जब पुण्य का उदय होता है तब मृत्यु के समय भी रक्षा हो जाती है। पाठकों विनोदी सहस्रभट की याद होगी। यह वीरवती के अन्तिम कुकर्म तक उसके आगे पीछे उपस्थित रहा है। उसने सच्ची घटना अपनी आँखों से देखी है। वह इस समय यहीं उपस्थित था। राजा का दत्त के लिए मारने का हुक्म सुनकर उससे न रहा गया। उसने अपनी कुछ परवाह न कर सब सच्ची घटना राजा से कह सुनाई। राजा सुनकर दंग रह गया। उसने उसी समय अपने पहले हुक्म को रद्दकर निरपराध दत्त को रिहाई दी और वीरवती को उसके अपराध की उपयुक्त सजा दी। सच है **पुण्यवानों की सभी रक्षा करते हैं।** दुष्ट स्त्रियों का ऐसा घृणित और कलंकित चरित देखकर सबको उचित है कि वे दुःख देने वाले विषयों से अपनी सदा रक्षा करें ॥२१-२३॥

वे महात्मा धन्य है जो भगवान् के उपदेश किए हुए पवित्र शीलव्रत से विभूषित है, कामरूपी क्रूर हाथी को मारने के लिए सिंह है, विषयों को जिन्होंने जीत लिया है, ज्ञान, ध्यान, आत्मानुभव में जो सदा मग्न हैं, विषयभोगों से निरन्तर उदास हैं, भव्यरूपी कमलों को प्रफुल्लित करने में जो सूर्य हैं और संसार समुद्र से पार करने में जो बड़े कर्मवीर खेवटिया हैं वे सबका कल्याण करें ॥२४॥

३३. सुरत राजा की कथा

देवों द्वारा पूजा किए गए जिनभगवान् के चरणों को भक्ति सहित नमस्कार कर सुरत नाम के राजा का हाल लिखा जाता है ॥१॥

सुरत अयोध्या के राजा थे। इनके पाँच सौ स्त्रियाँ थीं। उनमें पट्टरानी का पद महादेवी सती को प्राप्त था। राजा का सती पर बहुत प्रेम था। वे रात दिन भोगों में ही आसक्त रहा करते थे, उन्हें राज-काज की कुछ चिन्ता न थी। अन्तःपुर के पहरे पर रहने वाले सिपाही से उन्होंने कह रखा था कि जब कोई खास मेरा कार्य हो या कभी कोई साधु-महात्मा यहाँ आवें तो मुझे उनकी सूचना देना। वैसे कभी कुछ कहने को न आना ॥२॥